RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-02
February -2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

गुप्तोत्तरकालीन भारतीय कला

डॉ0 मनोज कुमार देव

नियर–के बी झा कॉलेज, कटिहार

शब्दावली–

स्वाभाविक – प्राकृतिक, प्रवृति – मन का झुकाव, शिखर – चोटी, वास्तुकला – इमारत, मकान आदि बनाने की कला, गर्भगृह – मकान के मध्य की कोठरी

एतिहासिक ग्रन्थ गवाह ह कि गुप्तोत्तर कालीन भारतीय कला अन्य कला की भाँति फल–फूल चुकी थी। सच मे गुप्तोत्तर कालीन कला को मध्ययुगीन कला कहना कदापि उचित नहीं होगा क्योंकि इससे यूरोप की मध्ययुगीन कला से तुलना की स्वाभाविक प्रवृति एत्पन्न होती है, क्लासिकल तथा पुनर्जागरण की सांस्कृतिक उपलविधियों के बीच का समय लेकिन भारत की गुप्तोत्तर कालीन कला के संबंध में ऐसा कहना सर्वथा अनुचित होगा। सच ता यह है कि यह कला गुप्तोत्तर कला की प्रोढ़ता की चरमावस्था था। ब्राह्मण धर्म के पुनरूत्थान ने इस कला की दिशा बहुत कुछ अंश में चित्रकला थी। वास्तुकला तक्षण कला एवं चित्रकला में भी शास्त्रीय नियमों का अनुकरण किया जाता था। लेकिन इन शास्त्रों का अनुकरण करते हुए भी कलाकारों ने अपनी मौलिकता का सुन्दर परिचय दिया। वैसे तो कलाकृतियों में एकरुपता देखने को नहीं मिलती है बल्कि विविधता का समावेश था। पर हाँ, मंदिरों और प्रस्तर मूर्तियों के गठन में विविधता का समावेश मिलता है। तभी तो कहा जाता है कि मूर्तियों और मंदिरों के निर्माण में शास्त्रीय नियमों द्वारा निर्धारित एकरूपता होते हुए भी स्थानीय तत्वों के समावेश तथा कलाकारों की स्थानीय तत्वों के समावश तथा कलाकार की कल्पना एवं सौनदर्य भावना की विशिष्टता के चलते विविधता आ जाती है। गुप्तोत्तरकालीन कला का विवेचन वास्तुकला, तक्षणकला, मिट्टी की मर्तियों और चित्रकला के तहत किया जा सकता है जो इस प्रकार है–

वास्तुकला : इस युग की वास्तुकला की मुख्य कृतियाँ मंदिर हैं। मोटे तौर पर भौगोलिक आधार पर शास्त्रकारों ने इनकी तीन शैलियाँ निर्धारित की हैं– नागर, द्रविड़ और वेसर। नागर शैली उत्तरी भारत में हिमालय से विंध्य प्रदेश के भूभाग में, द्रविड़ शैली कृष्णा तथा कुमारी अतंरीप के बीच अर्थात् आधुनिक तमिलनाडु पदेश में और वेसर विंध्य और कृष्णा के बीच जिसे दक्षिणावर्त भी कहा जाता है। इस क्षेत्र मे चालुक्य राष्ट्रकृट राजाओं द्वारा निर्मित मंकिर है। वेसर शैली में नागर और द्रविड़ शैली के तत्व मिश्रित हैं। यह सम्मिश्रण होयसल वंश के राजाओं के मंदिरों मे परिलक्षित होता है। शास्त्रकारों के अनुसार नागर शैली के मंदिर चतुष्कोण होते है। आधार से लेकर सिरे तक द्रविड़ शैली के मंदिरों का आकार अष्टभुज और वेसर का अर्धगोलाकार होता है।

प्राप्त उदाहरणों से उत्तरी भारत के मंदिरों की दो विशेषताएँ विशेष ध्यान देने योग्य हं। वे वर्गाकार होते हैं और प्रत्येक भुजा के बीच से प्रक्षेप निकलकर क्रमशः ऊपर तक चला जाता है। उठानी (मसमअंजपवद) में एक–एक शिखर होता है जो ऊपर जाते हुए वक्र का रुप ले लेता है। शीर्ष भाग गोलाकार आमलक और कलश होता है। शिखर में खड़ी रेखा की प्रधानता दिखाई देती है, अतः दसे रेखीय शिखर भी कहते हैं। प्रादेशिक विभिन्नता के कारण नागर शैली में भी विभिन्नता दिखाई देती है। किंतु वर्गाकार तथा ऊपर की ओर वक होते हुए शिखर इन मंदिरों की विशेषताएँ हैं। इसके विपरीत द्रविड़ शैली का मंदिर आयताकार तथा शिखर पिरामिड के आकार का होता है। यह शिखर आयताकार गर्भगृह की तरह के अनेक खंडों से बनाया जाता है। ऊपर गुबंदाकार स्तूपिका होती है। आधार योजना क हिसाब से गर्भगृह के चारोंओर वर्गाकार छत से ढका हुआ बाड़ा होता है जिसे 'प्रदक्षिणा–पथ' कहते हं। दीवारों पर बाहर की तरफ भित्तिस्तंभों से बने हुए ताख होते है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक मंजिल के चारों ओर एक खुला बरामदा होता है। बाद में अन मंदिरों के साथ अनेक स्तंभयुक्त मंडप, गलियारे तथा विशाल गोपुरम् भी जोड़ दिए गए।

उड़ीसा : उड़ीसा के मंदिर शुद्ध नागर शैली का प्रतिनिधित्व करते है। ये सातवीं से तेरहवीं शताब्दी के बीच बनाए गए। ये सातवीं से तेरहवीं शताब्दी के बीच बनाए गए। मंदिर–निर्माण का कार्य भुवनश्वर नगर में हुआ। इस काल में यहाँ लगभग 100 मंदिर बनाए गए। इनमें से लिंगराज मंदिर पूर्ण विकसीत आर्य नागर शैली के सर्वोत्तम उदाहरण है। इसके मुख्य भाग हैं– गर्भगृह जिसे देवलु कहते है। उससे जुड़ा हुआ दूसरा भाग

RRIJM 2015, All Rights Reserved

जगमोहन है– जो एक प्रकार का मंडप है जहाँ भक्त लोग एकत्र होते हैं। जगमोहन के सामने ही नृत्य मंडप और भोग मंडप होते है। लिंगराज मंदिर में ये सभी भाग एक ही धूरी पर पूर्व से पश्चिम की ओर फैले हुए है। सबसे आकर्षक भाग लिंगराज मंदिर का शिखर है। इसकी ऊँचाई 160 फुट है। शिखर पर आमलक और कलश है। सभा मंडप अथवा जगमोहन की छत पिरामिड के आकार की हैं। मंदिर के मुख्य शिखर की खड़ी धारियाँ उसकी गगनचुंबिता को और भी प्रभावशाली बनाती हैं। अपने प्रचुर अलंकरण तथा उत्तम शिल्पविधि के कारण यह मंदिर–निर्माण कला का सर्वोत्कृष्ट नमूना माना जा सकता है।

पुरी का जगन्नाथ मंदिर ठीक उसी प्रकार बना है जिस प्रकार लिंगराज का। इसके भी चार भाग हैं। यह आकार मं काफी विशाल है किन्तु इसका वास्तुविनाश सजीव तथा प्रभावशाली नहीं है। इसमें लिगंराज मंदिर जैसा संतुलन तथा गरिमा नहीं है।

भारतीय राजाओं और पूर्वी वास्तुकला की महान उपलब्धि कोणार्क का सूर्य मंदिर है। यह तेरहवीं शताब्दी का है और अपनी किस्म का एक है। अक (सूर्य) के इस विमान का निर्माण वास्तुकलाविद् तथा तक्षण–शिल्पी की सम्मिलित प्रतिभा का परिणाम है। यह मंदिर पूर्वी शैली की प्रौढ़ता का सुन्दर उदाहरण है। इसका प्रत्येक अंश अपने आप में परिपूर्ण है। संपूर्ण मंदिर की योजना इतनी अच्छी तरह बनाई गई है तथा विभिन्न अंग इस प्रकार विधिवत् समन्वित हैं कि यह मंदिर निर्माण–कल्पना की विशेषता की दृष्टि से अद्वितीय है। सूर्य पौराणिक कथा में अपने सात घोड़ों वाले रथ पर आकाश में चलता है। इस पौराणिक कथा को मंदिर के रूप में अभिव्यक्त किया गया है। मंदिर को रथ का रुप दिया गया है। मंदिर का आधार एक विशाल चबूतरा है। इयके चारों ओर पत्थर के तराशे हुए बारह पहिए लगाए गए है और सूर्य के रथ का पूरा आभास देने के लिए चबूतरे के सामने जो सीढ़ियाँ हैं उनसे सात अश्वों की स्वतंत्र मूर्तियाँ लगी है, मानों कि ये सातों घोड़े रथ को खींच रहे हों। इसी चबूतरे पर मंदिर के दो भवनों, रदेवुल और जगमोहन, का निर्माण किया गया था। शिखर सहित देवुल की ऊँचाई 225 फुट रही होगी और जगमोहन 100 वर्ग फुट का एक मंडप था। देवुल तो अब भग्न अवस्था में है। यिाखर के लिए उपयोग में लाए जाने वाले तराशे हुए प्रस्तर–खंड नीचे बिखरे पड़े है। किन्तु जगमोहन का शिखर पिरामिड के आकार का है और इससे कोणार्क मंदिर की प्राचीन भव्यता का अनुमान लगता है। मुख्य भवन के प्रवेश द्वार के सामने नाट्य मंदिर एक पृथक भवन के रूप में बनाया गया है। इन दोनों भवनो के चबूतरों के चारों ओर अनेक तराशी हुई आकृतियाँ हैं। ये मूर्तियाँ कामपरक हैं। बनावट में कोर्णाक का मंदिर कई कारणों से अद्वितीय है। यह कई शताब्दियों के मंदिर निर्माण के संचित और ठोस अनंभव का परिणाम है। मंदिर के सभी अंग इस तरह विधिवत् समन्वित हैं कि वे एक ही भवन के अविच्छिन्न अंग दिखाई देते हैं। यह मंदिर वास्तुकला के विकास को चरमावस्था माना गया है।

कोणार्क मंदिर की एक विशेषता यह है कि मंदिर के भवनों के सभी बाह्य भाग उकेरी हुई आकृतियों से सजे हुए हैं। ये उत्कीर्ण आकुतियाँ वास्तुकला का अभिन्न अंग हैं। फूल–पत्तियाँ, पशु, देव–दानव, काल्पनिक पशुओं की मूर्तियाँ छोटे या बड़े आकार में उत्कीर्ण हैं। अधिकांश उभरी आकृतियाँ स्त्री–पुरुषों को हैं और कुछ विद्वानों के अनंसार वे कामसुत्र में वर्णित कामपरक विषयों का चित्रण करती हैं। अन्य विद्वानों के अनुसार तांत्रिक पद्धति–संबंधी धार्मिक क्रियाओं को मंदिर के बाह्मा भागों में अंकित किया गया है।

खजुराहों : खजुराहों के मंदिर चंदेल राजाओं के समय 950–1050 ई0 के बीच बनाए गए। वे निर्माण कला की सुरुचि–सम्पन्न ललित अभिव्यक्ति है। नत्थर का बना हुआ एक चबुतरा है। यह नींव की मंजिल है और काफी ऊँ ची है। इसपर गर्भगृह, अंतराल, मंडप तथा अर्धमंडप है। कुछ मंदिरों में मंडप के दोनों ओर महामंडप हैं। गर्भगृह क चारां ओर प्रदक्षिणा पथ है। वास्तुकला की मुख्य विशेषता शिखर है। इन शिखरों पर छोटे–छोटे शिखर संलग्न है। इन्हें 'उरुश्रृंग' कहते हैं। ये छोटे आकार के मंदिर के ही प्रतिरूप है। अन उरुश्रृंगों ने मंदिर की बाह्माकुति को और भी सुन्दर बना दिया है। शिखर क शीर्ष भाग पर अमृतघाट और आमलक है। वास्तुकला की दृष्टि से इस मंदिर की विशेषता यह है कि मंदिर के सभी अंग भलीभंति समन्वित हैं। गर्भगृह, मंडप, अर्धमंडप इत्यादि मंदिर के सभी अंश इमारत के अविच्छिन्न अंग दिखलाई देते है। शिखर और उरुश्रृंगों सहित यह मंदिर एक पर्वत की भांति प्रतीत होता है।

मंदिर के दूसरी विशेषता है दीवारों के मध्य भाग का अलंकरण। दीवारों के चारों ओर दो या तीन चित्र वल्लरी हैं जिनपर उभरी हुई आकृतियाँ हैं। आकृतियाँ सजीव, सुगठित और अतिसुदंर कलाकृतियाँ हैं। कंडरिया महादेव मंदिर मे ऐसी 650 आकृतियाँ है। कुछ आकृतियाँ देवताओं और कुछ मनुष्यों की हैं। ये सब ललित मुद्रा में है और सजीव तथा प्रसन्न दिखाई देती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वे उस स्वर्ण युग के प्राणी हैं जबकि जीवन सुखद अनुभवों की एक श्रृंखला है। वास्तुकला मानवचेतना के स्पंदित है। मंदिर के अंदर

का भाग, द्वार के ऊपर की कड़ियाँ, मंडपों के स्तंभ शीर्ष आदि सभी उत्कीण आकृतियों से सुसज्जित हैं। कोष्ठाकार स्तंभ शीर्षों पर खड़े व्याल उत्कीर्ण आकृतियों से सुसज्जित हैं। कोष्ठकार स्तंभ शीर्षों पर खड़े व्याल उत्कीर्ण हैं। इन्हीं के बीच छोटे–छोटे फलकों पर नृत्य करती हुई तथा विभंग मुद्रा में स्त्रियों की मनमोहक आकृतियाँ तराशकर जमा दी गई हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कलाकार ने कुरूपता पर सौन्दर्य की विजय या पाशविकता तथा आध्यात्मिकता का विपर्यास कला में उभारने का सफल प्रयास किया है। कुछ स्त्रियों की उभरी हुई आकृतियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं, जैसे (1) पैर से काँटा निकालती हुई एक नायिका, (2) प्रसाधन–रत नायिका, (3) अलस नायिका, (4) माता और पुत्र, तथा (5) अनेक मिथुन आकृतियाँ। खजुराहों के मंदिरों में कंडरिया महादेव का मंदिर सर्वोत्तम है। यह अपने चबूतरे से 44 फुट ऊँचा है। सुंदर अनुपात, ललित आकृति, मंदिर की उभरी आकृतियों का अलंकरण सभी मिलकर ममंदिर को वास्तुकला का एक सुंदर नमूना बनाने में सहायक सिद्ध हुए हैं।

राजस्थान : गुप्तोत्तर काल में राजस्थान में एक सुंदर और समृद्ध निर्माण कला का विकास हुआ। इस काल के अवशेष जोधपुर में ओसिया नामक गाँव में प्राप्त हुए हैं। यह किसी समय एक समृद्ध नगर रहा होगा। यहाँ ब्राह्मण और जैन मंदिर मिले हैं। 99 मंदिर एक स्थान पर हैं और ये शुरु के हैं। 5 मंदिर बाद के बने हैं। ये मंदिर आकार में छोटे हैं, किंतु वास्तुकला तथा तक्षण कला की दृष्टि से सुंदर हैं। प्रत्येक मंदिर का आकार एक–दूसरे से भिन्न है और मंदिर–निर्माण–कल्पना की विशेषता तथा रचना की मौलिकता का परिचायक है। तीन हरिहर मंदिर आकार तथा अलंकरण की दृष्टि से सुन्दर हैं। इनमें से दो मंदिर पञ्चायतन शैली के हैं। उनके शिखर उड़ीसा के आरमभ काल के मंदिरों के शिखरों से मिलते–जुलते हैं। स्तभों के निचले भाग पर ढलाऊ पीठासन पर जो संगतराशी है उसमें सरलता तथा नूतनता है। इन मंदिरों से ही कुछ बाद का बा हुआ सूर्य का मंदिर है। इस मंदिर की प्रमुख विशेषता इयके अग्रभाग में है। यहाँ दो लंबे नालीदार स्तंभ है। ओसिया के अन्य मंदिरों की भांति यह भी पञ्चायतन प्रकार का है। मुख्य मंदिर के चारोंओर छोटे मंदिर हैं जो एक गलियारे से एक–दूसरे से मिले हुए हैं और एक बाड़े का काम करते है। मंदिर के विभिन्न अंगों के अनुपात और शैली में गरिमा है। शिखर का आकार और अलंकरण सराहनीय है। स्तंभों के आधार तथा शीर्ष पर मंगलघट है। वास्तुकला तथा तक्षणकला (काष्ठकला) की दृष्टि से यह मंदिर इस बात का परिचय देता है कि शिल्पी ने इसे प्रेम और यत्न से बनाया है।

महावोर का जैन मंदिर एक पूर्ण विकसित मंदिर का उदाहरण है। इसके मुख्य भाग है– गर्भगृह मंडप तथा खुला द्वार विकसित मंदिदर जिसके सामने एक अलंकृत तोरण है। यद्यपि यह मंदिर आठवीं शताब्दीं का बना हुआ है, इसके कुछ अंश दशवीं शताब्दीं के हैं। इन मंदिरों के स्तंभ पूण विकसित अवस्था में हैं और मंगलघाट, स्तंभों के आधार तथा शीर्ष भाग दोनों को अलंकृत करता है। स्तंभ के समस्त भाग को विविध अलंकरण साधनों से सजाया गया है। गर्भगृह के द्वार पर प्रतीक मूर्तियाँ तथा लोककथाएँ अलंकृत की गई हैं। द्वारों के ऊपर की कड़ी पर नवगृह उत्कीर्ण हैं। निचले भाग पर तारब उत्कीर्ण हैं जिनमें गंगा–यमुना की उभरी मूर्तियाँ हैं। लताओं को भी उकेरा गया है।

मंदिर विकास का अंतिम चरण सचिया माता के मंदिर में दिखाई देता है। इसका प्रारंभ 8वीं शताब्दी में हुआ किंतु अधिकांश भाग 12वीं शताब्दीं में पेरा हुआ। इस मंदिर का मंडप अष्ट–भुजाकार है। ये आठ स्तंभ एक गुंबदाकार छत को धारण करते है। इस मंदिर के शिखर का ढाँचा मिश्रित शैली का है। शिखर पर अनेक उरुश्रृंग हैं।

पश्चिमी भारत तथा गुजरात : गुजरात के भग्न मंदिरों में विशेष लावण्य तथा माधुर्य–समृद्धि है। अधिकांश मंदिर सोमंकी राजाओं के काल में बने हैं। मंदिरों के इस वैभव का कारण गुजरात की व्यापार–समृद्धि है। गुजरात के बंदरगाहों से पश्चिमी तथा पेर्वी द्वीपों के साथ व्यापार होता था। इन रत्नजटित मंदिरों का निर्माण केवल सोलंकी राजाओं के संरक्षण के कारण ही नहीं हुआ। इनके निर्माण में समाज के लोगों के दान और शिल्पियों के श्रम का भी योगदान है। गुजरात में शिल्पियों की श्रेणियाँ थीं जो मुख्य स्थापित के निर्देशन में मंदिरों को बनाते थ।

निष्कर्ष – गुप्तोत्तरकालीन कला की विशलेषणों प्रान्त यह जग–जाहिर होता है कि तत्कालीन कालों में गुप्तोत्तर कालीन कला अत्यंन्त ही मशहुर हो चुका थकी। देश–विदेश के कलाओं में इस कला की तुलना गर्व के साथ की जाती थी। इस काल में वास्तुकला के क्षेत्र में खासकर चालुक्य राष्ट्रकूट राजाओं द्वारा निर्मित मंदिर है। वेसर शैली में नागर तथा द्रविड़ शैली के तत्व मिश्रित है वहीं दूसरी ओर भारतीय राजाओं तथा पूर्वी वास्तुकला की महान उपलब्धि कोणार्क का सूर्य मंदिर है, वहीं गुप्तोत्तर काल में राजस्थान में एक सुन्दर तथा समृद्ध निर्माण कला का विकास हुआ। इस गुप्त काल के अवशेष जोधपुर में ओसिया नामक गाँव में प्राप्त हुआ है। जो किसी समय एक समृद्ध नगर रहा

RRIJM 2015, All Rights Reserved

होगा। प्रत्येक मंदिर का आकार एक–दुसरें से भिन्न है तथा मंदिर–निर्माण–कल्पना की विशेषता और रचना की मौलिकता का अनोखा परिचायक है।

संदर्भ सूची –

(1) प्राचीन भारत का इतिहास – संपादक – झा एवं श्रीमाली
(2) भारत का इतिहास –रोमिला थापर
(3) पान्थरी – भारत का स्वर्णयुग
(4) माजूमदार – वाकाटक, गुप्तयुग
(5) प्राचीन भारत का इतिहास – R.S.Tripathi

RRIJM 2015, All Rights Reserved